



ऑवला फलोत्पादन की नवीनतम तकनीकी

Innovative technology for aonla production

भानु प्रताप*, एच के सिंह एवं नन्द लाल शर्मा
Bhanu Pratap*, HK Singh and Nand Lal Sharma

लेख के विषय में / Article info

प्राप्त हुआ / Received on : 05/09/2020
स्वीकार हुआ / Accepted on : 27/09/2020
प्रकाशित हुआ / Published on : 07/10/2020

सारांश / Abstract

भारत वर्ष में फलों का उत्पादन दूसरे स्थान पर है। वर्ष 2017-18 के आँकड़ों के अनुसार भारत में 6.51 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल पर फलों की खेती हो रही है जिसमें 97.36 मिलियन टन प्रति वर्ष फल उत्पादन मिल रहा है। वर्तमान में फल उत्पादकता 14.59 टन प्रति हेक्टेयर है तथा फलों की शुद्ध उपलब्धता लगभग 200 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिदिन हो गई है। किसानों की आय बढ़ाने के विकल्प के रूप में फल उत्पादन के रूप में ऑवला की खेती, ग्रामीण क्षेत्रों में लघु उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए, रोजगार के अधिक अवसर उपलब्ध करवाने हेतु, शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों की अनुपयोगी भूमि को ऑवला उत्पादन के लिए उपयोगी बनाने, जलवायु परिवर्तन संबंधी समस्याओं का सामना करने पर विशेष बल दिया जाए। इसके अतिरिक्त, नई शोध उपलब्धियों जैसे प्रबंधन तकनीकी, डिसीज डायग्नोस्टिक तकनीकी, सघन बागवानी, बूँद-बूँद सिंचाई के साथ उर्वरकों का प्रयोग, जैव कीट नाशक का उपयोग पैकेजिंग प्रसंस्करण में ई-मार्केटिंग आदि के प्रयोग से ऑवला उत्पादन को बढ़ावा देने की अपार संभावनाएँ हैं।

मुख्य शब्द / Key Words

ऑवला, नवीनतम तकनीकी, प्रजाति
Aonla, innovative technology, Varities

परिचय / INTRODUCTION

फल के गुण एवं महत्व

औषधीय गुणों एवं पोषक तत्वों की प्रचुर मात्रा विद्यमान होने के कारण आंवला एक महत्वपूर्ण फल है जिसके 100 ग्राम गूदे में 550-750 मि. ग्राम विटामिन सी की मात्रा पायी जाती है। इसके अलावा इसमें शर्करा एवं लवण-कैल्शियम, फास्फोरस, पौष्टिक, आयर्न की मात्रा भी पायी जाती है। सूखे फलों का उपयोग त्रिफला, च्वनप्राश, चूर्ण इत्यादि अन्य आयुर्वेदिक औषधियों को निर्मित करने में किया जाता है।

फल द्वारा आंवला केश तेल व शैम्पू भी तैयार किया जाता है। ताजे फलों से चटनी, अचार, मुरब्बा, शर्बत, जैम, कैण्डी इत्यादि खाद्य पदार्थ निर्मित किये जाते हैं। फल की उपयोगिता औषधीय गुण के कारण काफी अधिक है। आंवला का फल चर्म रोग खुजली, सिर दर्द, हैजा, कब्जियत, मधुमेह, दिल की अत्यधिक धड़कन, पेशाब में जलन, पेचिश, अतिसार, गर्मी, पित्त, सर्दी-जुकाम, मसूड़ों का दर्द व खून का बहना इत्यादि रोगों में काफी लाभकारी पाया जाता है। आंवला का बीज का प्रयोग मधुमेह व चर्म रोगों में अत्यन्त गुणकारी होता है।

फलों की उपयोगिता के कारण आंवला की खेती का व्यावसायिक महत्व काफी अधिक हो गया है। इसके अलावा आंवला की खेती करने में कम लागत आती है और फलत की समस्याओं से कम प्रभावित होती है। इसलिए इसका क्षेत्रफल उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों में काफी अधिक बढ़त जा रहा है और देशों के अन्य प्रदेशों में भी व्यावसायिक स्तर पर किया जा रहा है।

भूमि एवं जलवायु

आंवला उपोष्ण जलवायु का पौधा है जो बहुत ही कठोर होता है। और हर प्रकार की जलवायु व भूमि को सहन करने की क्षमता रखता है। इस फल को कम उपजाऊ,

उसरीली एवं बंजर भूमि तथा कम सिंचाई वाली क्षेत्रों में आसानीपूर्वक उगाया जा सकता है। बलुई दोमट मिट्टी से लेकर मटियार दोमट, काली मिट्टी, दोमट व अन्य सभी प्रकार की भूमि में आंवला की काश्त की जा सकती है। इसके अलावा क्षारीय या उसरीली भूमि में आंवला की काश्त की जा सकती है। इसके अलावा क्षारीय या उसरीली भूमि जिसका पी.एच.मान 7, 50-9.5 तक, विनिमयशील सोडियम 30-35 प्रतिशत तथा विद्युत चालकता 10-12 मिलीमोहो प्रति से. मी. तक हो, आंवला की काश्त की जा सकती है। ऐसी भूमि में जल निकास की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। चूंकि आंवला का पौधा जंगली रूप में देश के अधिकांशतः जंगलों में मिलता है। अतः इसकी खेती समुद्रतल 1800 मी० ऊँचाई वाले स्थानों पर भी उगाये जा सकते हैं।

प्रजातियाँ

देशी आंवले के अतिरिक्त आंवले की अन्य व्यावसायिक किस्में भी हैं जो फलों के आकार एवं गुणों में भिन्न होती हैं। आदर्श आंवला किस्म में अग्रलिखित गुणों का समावेश होना चाहिए। पौधे कम आयु में औसत उत्पादन क्षमता वाले हो, प्रतिशाय मादा फूलों की संख्या अधिक हो, फल मध्यम से बड़े आकार, चिकनी व चमकदार सतह वाले हों, गूदा रेशारहित एवं फल सड़न तथा ऊतक क्षय व्याधि से प्रभावित न हो एवं भण्डारण-क्षमता अधिक होनी चाहिए। आंवले की प्रमुख व्यावसायिक किस्में निम्नलिखित हैं।

1. **बनारसी**— यह मुरब्बा बनाने हेतु सबसे अच्छी किस्म है। फल बड़े आकार (48.60 ग्राम/फल) गूदा अधिक, कम कसैला, छिलका पतला, पारदर्शक, चमकदार, सफेद हरा तथा कम रेशा वाला होता है। प्रति शाम मादा फूलों की संख्या कम होने के कारण फलत कम होती है। फलों में विटामिन -सी

अखिल भारतीय शुष्क क्षेत्र फल समन्वयक परियोजना, फल विज्ञान विभाग, उद्यान एवं वानिकी महाविद्यालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ०प्र०)

*Corresponding author Email : drbhanupratap71@gmail.com

की मात्रा सर्वाधिक होती है।

2. चकैया— यह सबसे अधिक उपज देने वाली किस्म है। फल अपेक्षाकृत छोटे आकार वाले, चपटे, रेशेदार, कम गूदे वाला व सख्त होता है। फलों का रंग हल्का हरा एवं भण्डारण-क्षमता अच्छी होती है। आचार एवं अन्य उत्पादों के लिए अच्छी किस्म है।

3. फान्सिस (हाथीझूल)— इस किस्म के पौधों की शाखायें तथा पत्तियां नीचे की ओर झुकी रहती हैं, इसलिये इसे हाथीझूल एवं राजा प्रतापगढ़ के जिले से उत्पत्ति होने के कारण किलेजात के नाम से भी जाना जाता है। फल बड़े आकार वाले अण्डाकार, फल सतह चिकनी, रंग हल्का रंग, गूदा अधिक, कम रेशेदार होते हैं। यह औसत फलत देने वाली किस्म है। भूमि में सहागे (बोरान) की कमी होने पर फल काले पड़ जाते हैं जिसे उतकक्षय या शुष्क विगलन कहते हैं। इसमें फल सड़कर गिरने लगते हैं। कभी-कभी 50-60 प्रतिशत फल उतकक्षय से प्रभावित हो जाते हैं।

4. कंचन (नरेन्द्र आंवला-4)— यह अधिक उत्पादन देने वाली किस्म है जो देर से पकती है। फल छोटे से मध्यम आकार लम्बाई लिये हुए गोल, चिकनी, हल्के पीले रंग वाले होते हैं। इनका मूदा रेशायुक्त एवं सख्त होता है। फलों को आचार एवं चटनी के रूप में प्रयोग किया जाता है। प्रतिशाय मादा फूलों की संख्या अधिक होती है।

5. कृष्णा (नरेन्द्र आंवला-5)— यह मध्य समय में तैयार होने वाली तथा औसत उपज वाली किस्म है। फल बड़े आकार, चिकनी सतह, पीले सफेद रंग के होते हैं। फल सतह पर गुलाबी रंग के धब्बे विशेषकर प्रकाश वाले हिस्से में पाये जाते हैं। गूदा मुलायम तथा कम रेशेदार एवं मध्यम भण्डारण क्षमता वाला होता है। मुरब्बा के लिए सबसे अच्छी किस्म है क्योंकि इसमें फल गर्म करने पर फटते नहीं हैं।

6. एन.ए.-7— यह फान्सिस किस्म से चयनित किस्म है, जिसके पौधे लगाने के बाद अन्य किस्मों की तुलना में जल्दी ही फल देने लगते हैं। फल मध्यम आकार, चिकनी सतह, मध्यम रेशायुक्त, उतकक्षय से रहित एवं हल्के पीले, हरे रंग के होते हैं। फल सतह चिकनी तथा चमकदार होती है। मादा फलों की संख्या प्रतिशाय अधिक होने के कारण उत्पादन अच्छा होता है। भण्डारण क्षमता मध्यम होती है।

7. एन.ए.-6— यह चकैया से चयनित की गयी है। फल मध्यम से बड़े आकार, चिकनी सतह एवं पीले रंग के होते हैं। गूदा मध्यम

रेशायुक्त तथा मुलायम होता है। प्रतिशाय मादा फूलों की संख्या औसत होने के कारण फलत अच्छी होती है।

8. एन.ए.10— यह आगरा से चयनित किस्म है। शीघ्र फलने वाली किस्म है। फल मध्यम से बड़े आकार, चिकनी सतह एवं पीले रंग के होते हैं। गूदा मुलायम तथा लगभग रेशाहीन होता है। मादा फूलों की संख्या औसत होने के कारण उत्पादन क्षमता भी औसत होती है।

प्रवर्धन

प्रवर्धन आंवला के पौधों का प्रवर्धन बीज तथा कायिक विधियों द्वारा किया जाता है। बीजू पौधों में असमस्ता, फलत व फलगुणता में विभिन्नता तथा देने से फलत होने के कारण व्यावसायिक स्तर पर बाग में रोपण करना उचित नहीं होता कायिक विधियों में भेंट कलम बन्धन तथा पैबन्दी चश्मा द्वारा पौधों का प्रवर्धन आसानीपूर्वक किया जा सकता है। इस विधि से पौधों को प्रवर्धित करने के लिए अच्छी फलत देने वाली किस्मों के मातृ पौधों से सांकुर शाक का चयन करना चाहिए। भेंट कलम जुलाई-अगस्त माह में तथा चश्मा (पैच बडिंग) द्वारा प्रवर्धन मई- सितम्बर माह तक करना उचित पाया गया है। पैबन्दी चश्मा द्वारा प्रवर्धित पौधे काफी कम समय में अच्छी वृद्धि कर लेते हैं और रोपण युक्त हो जाते हैं।

पौध-रोपण विधि

रोपण दूरी— पौध रोपण दूरी भूमि की दशा, उर्वरक शक्ति अन्तराल शस्य एवं पूरक फसलों का ध्यान में रखते हुए सुनिश्चित किया जाता है ताकि पौधों की नियमित औसत फलत मिलती रहे और पौधों में किसी प्रकार के पोषक तत्वों की कमी तथा कीट-व्याधियों से प्रभावित न हों। इसके लिए 8-10 मीटर दूरी पर रोपण करना चाहिए।

गड्ढों की खुदाई एवं भराई

गड्ढों की खुदाई मई-जून माह में करनी चाहिए। 1×1×1 मीटर आकार वाले गड्ढों की खुदाई करने के बाद 15-20 दिन तक खुला छोड़ देनी चाहिए ताकि भूमि का तापीकरण से मिट्टी के हानिकारक कीड़े-मकोड़े इत्यादि नष्ट हो जाय। इसके पश्चात् प्रत्येक गड्ढों को 2-3 टोकरी गोबर की सड़ी खाद, 200-250 ग्राम सुपर फास्फेट 50-100 ग्राम बी.एच.सी. चूर्ण या 1.0-1.50 किलोग्राम नीम की खली का मिश्रण को मिट्टी में गड्ढे के ऊपरी सतह तक (15-20 सेमी0) ऊँचाई भर देनी चाहिए। इसके बाद सिंचाई कर देनी चाहिए। यदि भूमि ऊसरीली हो तो प्रत्येक गड्ढे में 5-10 कि.ग्रा. जिप्सम या पाइराइट की मात्रा डालना बहुत ही आवश्यक होता है।

रोपण समय

पौध रोपण का उचित समय जुलाई-अगस्त माह है। सिंचाई की सुविधा होने पर फरवरी माह में भी रोपण किया जा सकता है।

रोपण का तरीका व्यावसायिक बाग संस्थापन के लिए कई नयी सघन फसल पद्धतियां अपनायी जा सकती है जिसके प्रति इकाई क्षेत्रफल पर अधिक से अधिक संख्या में फसलों को उगाकर अधिक आमदनी प्राप्त किया जा सकती है। उनका संक्षिप्त विवरण निम्न है—

1. सिंगल टायर पद्धति या एक फसलीय रोपण विधि—

इस विधि में केवल आंवला की किस्मों का ही रोपण करते हैं जिसके कारण बाग की भूमि का पूरा उपयोग नहीं हो पाता।

2. टू-टायर पद्धति या द्विफसलीय रोपण विधि इस विधि से दो फल किस्मों का रोपण किया जाता है जैसे— आंवला, अमरुद आंवला बेर इत्यादि।

3. श्री-टायर पद्धति या तीन फसलीय रोपण विधि

इस रोपण विधि में तीन फल भाग।

उपयोग में लाया जा सकता है।

1. आंवला + अमरुद+फालसा
2. आंवला + अमरुद+ करौंदा
3. आंवला+बेर+करौंदा
4. आंवला + बेर + फालसा

4. फोर-टायर पद्धति या चार फसलीय रोपण विधि यह एक सघन रोपण पद्धति है जिसमें बाग का अधिकतम भाग का उपयोग चार फसलों को उगाकर किया जा सकता है, जिसमें प्रति इकाई क्षेत्रफल से अधिक से अधिक आमदनी मिल सके।

1. आंवला +अमरुद+करौंदा+ लेमनग्रास / मैट्रीकेरिया
2. आंवला+ अमरुद + फालसा +पामारोजा /खस
3. आंवला + बेर + फलसा + गोभी / पालक/लहसुन
4. आंवला + बेर +करौंदा + पामारोजा या अरहर

सिंचाई

पौध रोपण के पश्चात् तुरन्त सिंचाई करनी चाहिए। बाद में आवश्यकतानुसार 10-15 दिन के अन्तर पर सिंचाई करते रहना चाहिए। गर्मी माह में सिंचाई की विशेष ध्यान रखनी चाहिए। बरसात व जाड़े के दिनों में सिंचाई की अधिक आवश्यकता नहीं पड़ती है। अधिक पानी के लिए जल-निकास की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

निकाई-गुड़ाई

पौधों की समुचित वृद्धि के लिए अनावश्यक शाखाओं की काट-छांट आवश्यकतानुसार करते रहना चाहिए ताकि पौधों की सामान्य वृद्धि व आकार हो सके। खरपतवार का नियन्त्रण के लिए समय-समय पर निकाई-गुड़ाई भी करते रहना चाहिए। बाग की प्रारम्भ की अवस्था में अन्तराशस्य फसलों की खेती भी कर सकते हैं।

खाद एवं उर्वरक

पोषक तत्वों की मात्रा पौधों की आवस्था भूमि उर्वरता फलतदशा के आधार पर निर्धारित करनी चाहिए। औसतन 10 कि.ग्रा. सड़ी गोबर की खाद के साथ 100 ग्राम नत्रजन 50 ग्राम फास्फोरस तथा 75 ग्राम पोटैश प्रति वर्ष वृक्ष देना चाहिए। यह मात्रा प्रति वर्ष की दर से 10 वर्ष की अवस्था तक बढ़ाने रहना चाहिए। जिसकी कुल मात्रा 1000 ग्राम नत्रजन 500 ग्राम फास्फोरस तथा 750 ग्राम पोटैश की आवश्यकता पड़ती है। इस मात्रा को दो बार में देना उपयुक्त होता है। प्रथम मात्रा जनवरी-फरवरी तथा दूसरी मात्रा जुलाई-अगस्त में प्रयोग करनी चाहिए। उर्वरकों को भूमि में 10-25 सेमी. की गहराई पर तथा तना से 120-150 सेमी० की दूरी पर थालों की मिट्टी में अच्छी प्रकार मिलाकर देनी चाहिए और उसके बाद हल्की सिंचाई अवश्य कर देनी चाहिए। फलों में शुष्क बिगलन (निकोसिस) की समस्या हो तो 0.6 प्रतिशत बोरेक्स (सुहाग) का तीन छिड़काव 10-12 के अन्तर पर अवश्य करें।

इस प्रकार पोषक तत्वों की उचित मात्रा का प्रयोग करने पर मादा फूलों की संख्या फल का कम गिरना, फलों की संख्या, आकार फल उपज तथा विटामिन-सी की मात्रा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है और बाग की फलत क्षमता काफी समय तक बनी रहती है।

फलन की समस्या आंवला के वृक्ष 50-60 वर्ष तक फलत देते हैं। नर व मादा फलों को अलग-अलग भाग पर पाय जाने के कारण मादा फूलों की संख्या कम होने पर परागण ठीक प्रकार नहीं हो पाता और फलत कम हो जाती है। यह समस्या बनारसी किस्म में अधिक पायी जाती है, जिसमें 30 प्रतिशत ही परागण हो पाता है। इस किस्म के साथ अन्य किस्मों को रोपण करने पर अच्छी फलत होती है। इसके लिए कंचन, कृष्णा, चकैया एवं एन. ए.-7 किस्मों का रोपण करने पर अफलन की समस्या नहीं पायी जाती है।

फल का गिरना आंवला के फल पेड़ से तीन बार में गिरते हैं। प्रथम बार में फूल व फल गिरते हैं जिसमें परागण की किया हवा या

मधुमक्खी के माध्यम से ठीक समय पर नहीं हो पाती। दूसरी अवस्था जब फल निशेचन के पश्चात् सुषुप्तावस्था परिपूर्ण करने के बाद (जुलाई-अगस्त) पौधों में हार्मोन्स की मात्रा कम होती है। इनकी मात्रा पौधों की नयी शाखाओं की वृद्धि के समय अधिक होती है। तीसरी अवस्था इन अवस्थाओं में पौधों में पोषक तत्वों व नमी की समुचित मात्रा पर विशेष ध्यान रखनी चाहिए।

फसल सुरक्षा आंवला में कीट व व्याधियों से विशेष क्षति नहीं होती। परन्तु बाद में समय-समय पर आवश्यक शस्य क्रियाओं को न करने पर कुछ कीड़ों व व्याधियों का प्रकोप हो जाता है। आंवला में प्रमुख कीट व व्याधियां निम्न है—

प्रमुख कीट

1. **छाल खाने वाला कीट**— इस कीट का प्रकोप तना व शाखाओं पर होता है। हम कीड़े की सुडिया तना की टहनियों की जड़ों पर काटकर छाल के अन्दर घुस जाती है और सुरंग बनाकर भितरी ऊतक को खेती रहती है जिसके कारण पौधों की वृद्धि एवं फलत पर विपरीत प्रभाव पड़ता है इसकी रोकथाम के लिए रूई में मिट्टी का तेल, पेट्रोल या सेल्फास की गोलियां सुराग में अन्दर डालकर चिकनी मिट्टी से बन्द कर देनी चाहिए। इस कार्य को सितम्बर-अक्टूबर या फरवरी माह में करना चाहिए।

2. **सूटगाल मेकर**— इस कीट की छोटी झल्लियां शाखा के शीर्ष भाग में छेद करके जुलाई-अगस्त माह में अन्दर घुसकर गांठें बना लेती हैं। प्रभावित शाखा का अन्तिम भाग फूलकर गांठ के रूप में दिखाई पड़ता है। जिसके कारण शाखाओं की वृद्धि रुक जाती है। इसकी नियन्त्रण के लिए प्रभावित भाग को मार्च-अप्रैल में काटकर जला देना चाहिए। इसके बाद मोनोक्रोटोफास (1.25 मि.ली. /लीटर) या डाइमिथियोन (2 मि.ली. /लीटर) या रोगार (1 मि.ली. /लीटर) या क्यूनालफास (1 मि.ली. /लीटर पानी) को घोल बनाकर दो छिड़काव अवश्य कर देना चाहिए।

3. **मिलीबग (गुजिया)**— आंवला में इस कीट का प्रकोप कम दीखा गया है। यह सफेद चपटा, पंखहीन कीट होता है जो नयी शाखाओं पत्तियों फलों का रस चूसकर कमजोर बना देती है। पेड़ों की सभी भागों पर चिपचिपा पदार्थ की पर्त दिखाई देती है जिसके कारण पौधों की वृद्धि नहीं हो पाती। इसकी समय पर रोकथाम न करने पर भयंकर प्रकोप हो जाता है और पौधों की वृद्धि व फलत नहीं हो पाती। इसके अलावा अन्य फल वृक्षों जैसे-आम, नीबू, बेर, कटहल अमरुद इत्यादि

को भी प्रभावित करता है। इसकी रोकथाम के लिए एक गरमी जुलाई अवश्य कर देने पर अण्डे-बच्चे नष्ट हो जाते हैं। इसके बाद सितम्बर-अक्टूबर माह में पेड़ों की जड़ों के आस-पास गुड़ाई करके फालीडाल या मेथइल पेरथियान (200 ग्राम प्रति पेड़ छिड़ककर मिट्टी में मिला देना चाहिए।) इसके अलावा 400 गेज मोटी पालीथीन की 25-30 सेमी० चौड़ी पट्टी को मुख्य तना के चारों तरफ चपेट कर ऊपर व नीचे वाले भाग को सुतली से बांध कर ग्रीस या काली मिट्टी द्वारा लेप कर देनी चाहिए। कीट का पूरी तरह नियन्त्रण न होने पर मिथइली पेरथियान 1.5 मि.ली. ग लीटर (या मोनोक्रोटोफास) 1 मि.ली./लीटर या कार्बोरिल (4 ग्राम/लीटर) में से किसी एक का घोल बनाकर अक्टूबर-नवम्बर माह में छिड़काव करनी चाहिए।

4. **तना छेदक कीट**— यह कीट नयी शाखों की छाल को खाता है जिसकी बजह से पत्तियां सूखने लगती हैं। इसकी रोकथाम के लिए जून-जुलाई में एल्ड्रीन या इन्डोसल्फान का 0.05 प्रतिशत घोल बनाकर छिड़काव करनी चाहिए। शाखाओं में सुराख को पेट्रोल, केरोसीन तेल में रूई भिगोकर डालकर मिट्टी में बन्द कर देनी चाहिए।

5. **माहू**— यह कीट नयी पत्तियों व कोमल टहनियों का रस चूसते हैं जिसके कारण फूल-फल कम बनते हैं और फलों का गिराव अधिक होता है। इसकी रोकथाम के लिए फासमोमिडान (0.5 मि.ली./लीटर या डइमिथेट) 1 मि.ली./लीटर या 1 मि.ली. प्रतिलीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

व्याधियां

आंवला में व्याधियों का प्रकोप कम पाया गया है। इसके कुछ बीमारियों का लक्षण दीखा गया है।

1. रस्ट यह एक कवक व्याधियों हैं। आवले की पत्तियों पर गोल या अंडाकार लाल धब्बे बन जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए 0.2 प्रतिशत डाइथेनजेड-78 का घोल दो बार छिड़काव 15 के अन्तर पर अगस्त-सितम्बर में करना चाहिए।
2. फल सड़न/गलन इस रोग का प्रकोप अक्टूबर-नवम्बर में होता है जिसमें फल पर सुनहरे पीले रंग के छोटे-छोटे धब्बे दिखाई देते हैं। और फल पिलपिला होकर सिकुड़ जाता है। फल तोड़ाई के समय ऐसे फलों को नहीं भेजना चाहिए।
3. ऊतक क्षय व्याधि इस व्याधि का प्रकोप फ्रांसिस किस्म में अधिक होता है। जबकि बनारसी व चकैया किस्मों प्रकोप नहीं

दीखा गया है। यह व्याधि भूमि में बोरान की कमी के कारण अधिक होता है। इसमें फल का गूदा अन्दर से काला पड़कर सड़ने लगता है। इसकी रोकथाम के लिए 0.4-0.6 प्रतिशत बोरेक्स का दो छिड़काव अप्रैल व जुलाई माह में करनी चाहिए।

फल तोड़ाई एवं उपज

प्रवर्धन विधि पैच बडिंग द्वारा तैयार ऑवला करीब तीसरे-चौथे वर्ष में ही फलने लगता है। और 40-50 वर्षों तक फलत देता रहता है। औसतन फल उपज 10-12 वर्ष के बाद ही मिलता है। फल की तोड़ाई नवम्बर-दिसम्बर से लेकर फरवरी-माह तक की जाती है। फलों की तोड़ाई बांस की सीढ़ियों के सहारे की जाती है और फलों की छंटाई करके टोकरियों में बन्द करके विपणन

के लिए बाजार भेजा जाता है। फल-उपज किस्मों पेड़ों की आयु व देख-रेख पर निर्भर करती है। औसतन 2 क्विंटल प्रति पेड़ फल उपज होती है।

आमदनी ऑवले की काश्त अन्य फल वृक्षों की अपेक्षाकृत काफी आसान है क्योंकि इसकी खेती करने पर प्रति वर्ष औसतन अधिक फलत मिलती रहती है। और रख-रखाव एवं रोग व कीट का प्रकोप भी कम होता है। यदि ऑवला के बीच में अन्य फल किस्मों व फसलों की खेती करें तो प्रति हेक्टेयर आमदनी दो गुनी हो सकती है।

निष्कर्ष / Conclusion

ऑवला के प्रसंस्करण एवं औषधीय गुणों को देखते हुये उत्तर प्रदेश के साथ-साथ पूरे भारत वर्ष में इसके कृषिकरण की बहुत अच्छी संभावनाएँ हैं। क्योंकि इसकी खेती

अनुपयोगी भूमि, उद्योगों जैसे बड़े-बड़े उद्यानों के साथ जहाँ अन्य फलदार वृक्षों को पालतू जानवर नुकसान पहुँचाते हैं ऐसे स्थानों में भी ऑवला का कृषिकरण किया जा सकता है। ऑवले की दिन प्रतिदिन बाजार में माँग बढ़ने से एवं इसमें औषधीय गुण की भरपूर मात्रा होने से जो आज के समय में विटामिन सी जैसे तत्वों की आवश्यकता है। इसका व्यवसायिक कृषिकरण करने से कृषकों के आर्थिक लाभ के साथ-साथ शारीरिक एवं सामाजिक लाभ भी लिया जा सकता है वैज्ञानिक रूप से परीक्षण कर कृषिकरण हेतु क्षेत्र विशेष का चयन, कृषिकरण हेतु चयनित प्रजातियों के विभिन्न क्षेत्रों में, कृषिकरण ट्रायल कर उच्च किस्म की प्रजातियों का चयन करना आदि प्रमुख है।

संदर्भ सूची / REFERENCES

- कुमारी प्र, चौधरी अ कु एम शर्मा ब. 2018. हरी खाद रु मृदा उर्वरा शक्ति एवं उत्पादकता को अक्षुण्ण बनाए. कृषि मञ्जूषा 1 (1):41-43.
- सन्तराम. (1993). ऑवला वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार की योजना में प्रकाशित, प्रकाशन निदेशालय गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय पंतनगर-263 145, पेज. 2-75.
- प्रवीन कुमार शुक्ल एवं अशोक कुमार पाण्डेय. (2008). आधुनिक फलोत्पादन

- मूल सिद्धांत एवं विधियाँ, शुभंगल प्रकाशन, लखना रोड बकेवर, इटावा उ. प्र.-पेज 160-165.
- अनुज कुमार एवं भानु प्रताप. (2013). एनोला की उपज और गुणवत्ता पर सूक्ष्म पोषक तत्वों का प्रभाव (*Embllica officinalis Gaertn*) सी वी Chakaiya, एमएससी (Ag) थीसिस, बागवानी फल विज्ञान विभाग कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)।

उद्धरण / Citation:

- प्रताप भानु, सिंह एच के एवं शर्मा नन्द लाल. 2020. ऑवला फलोत्पादन की नवीनतम तकनीकी। कृषि मञ्जूषा 3 (1):23-26
- Pratap B, Singh HK and Sharma NL. 2020. Innovative technology for aonla production. *Krishi Manjusha* 3(1): 23-26